International Journal of Multidisciplinary Trends

**E-ISSN:** 2709-9369
**P-ISSN:** 2709-9350
www.multisubjectjournal.com
IJMT 2020; 2(2): 95-96
Received: 30-06-2020
Accepted: 04-09-2020

**किरन पूनिया**
एसोसिएट प्रोफेसर, डी.ए.वी. कॉलेज (लाहौर), अम्बाला, हरियाणा, भारत

**Corresponding Author:**
**किरन पूनिया**
एसोसिएट प्रोफेसर, डी.ए.वी. कॉलेज (लाहौर), अम्बाला, हरियाणा, भारत

# मध्यवर्गीय पारिवारिक संत्रास की गाथा 'आधे–अधूरे'

## किरन पूनिया

**प्रस्तावना**

नाटक साहित्य की प्राचीनतम विधा है। भरतमुनि का नाट्यशास्त्र इसका जीता जागता प्रमाण है। प्राचीनकाल में नाटक काव्य–रूप में लिखे जाते थे। समय बीतने के साथ–साथ गद्य रूप में नाटक लेखन की शुरूआत भारतेन्दु युग से होती है। भारदेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी में इस विधा का वर्तमान रूप में सूत्रपात किया। भारतेन्दु युग के पश्चात प्रसाद युग में हिन्दी नाटक ने कथ्य और शिल्प की गंभीरता को धारण किया। प्रसाद के अन्तिम नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' से हिन्दी साहित्य में एक नया मोड़ आता है जिसे आगे चलकर मोहन राकेश समृद्ध करते हैं। समान्यतः हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत मोहन राकेश का व्यक्तित्व अन्तर्विरोधों का व्यक्तित्व माना जाता है। लेकिन यह एक सतही आकलन है क्योंकि ''यदि उनका व्यक्तित्व अत्यन्त बिखरा होता, अव्यवस्थित होता तो शायद उनकी रचनाओं में एक–एक भाव अनुभाव एवं संचारी भावों तथा एक–एक शब्द की जो व्यवस्था है वह कदापि संभव नहीं हो पाती, हाँ यह जरूर है कि मोहन राकेश का बाह्य जगत बिखरा हुआ था लेकिन अन्तः लोक अत्यन्त व्यवस्थित, संयमित है।''[1] उनका व्यक्तित्व बहुआयामी है। विलक्षण प्रतिभावान मोहन राकेश का जीवन अनेक उतार–चढ़ाव तथा विरोधी गुणों से परिपूर्ण है। प्रत्येक महान कलाकार जीवन के प्रत्येक क्षण को जीता है और उस अनुभूति को कला के आवरण में सँवाकर अभिव्यक्ति देता है। मोहन राकेश समर्पित साहित्यकार थे। ''समष्टि में जीते हुए भी राकेश व्यष्टिगत एवं स्व–संचालित जीवन जीते थे। उन्होंने जीवन पथ निश्चित नहीं किया था पर निजिपन को छोड़कर वे बाहर भी नहीं गए थे।''[2] उन्होंने अपने जीवन को एक सांचे में ढालकर उसे मुक्त रखा था इसलिए उनका जीवन ही साहित्य बन गया।

घनानन्द शर्मा के शब्दों में, "हिन्दी नाट्य साहित्य में भारतेन्दु और प्रसाद के बाद लीक से हटकर कोई नाम उभरता है तो मोहन राकेश का।[3]

हिन्दी नाट्य साहित्य की परम्परा में नाटककार मोहन राकेश का योगदान अतुलनीय है। मोहन राकेश के तीनों नाटक – आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस तथा आधे–अधूरे कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से अत्यंत प्रशंसनीय एवं महत्वपूर्ण हैं। आषाढ़ का एक दिन रोमानी भावुकता से युक्त है जबकि लहरों के राजहंस में नन्द के माध्यम से वर्तमान युगीन मानव की अनिश्चयात्मक स्थिति को दर्शाया गया है। आधे–अधूरे मोहन राकेश का तीसरा और अंतिम नाटक है जो उनकी विकास–यात्रा की अगली मंजिल का सूचक है।

आधे–अधूरे सातवें दशक का महत्वपूर्ण नाटक रहा है। राकेश जी ने जब लेखन कार्य प्रारम्भ किया तब सम्पूर्ण विश्व दो महायुद्धों के भीषण परिणाम को भुगत रहा था। यह वह समय था जिसने परम्परागत नैतिक और सांस्कृतिक मान्यताओं को प्रभावित किया। औद्योगिकरण और शहरीकरण ने लोगों को आशंकित, अविश्वासी, अमानवीय और संवेदनहीन बना दिया। इस प्रकार के वातावरण ने मध्यम वर्ग को विशेष रूप से प्रभावित किया। अपने नाटक 'आधे–अधूरे' के विषय में मोहन राकेश ने कहा था, "मैं आजकल ही में एक नाटक पूरा करने वाला हूँ, जिसका नाम 'आधे–अधूरे' है। अधूरे का मतलब है –'इन्कम्पलीट' और आधे का मतलब 'हाफ' है। यह आज के सामान्य वर्ग से संबंधित है जो अपने आप में आधा भी है और अधूरा भी। यह इस शहर के मध्यवर्गीय परिवार की कहानी है, जिसे परिस्थितियां निचले वर्ग की ओर धकेलती जा रही हैं। उनके जोश, पराजय, इच्छाएं, संघर्ष और इसके साथ–साथ स्थिति का हाथ से फिसलते जाना –मैंने सब कुछ उसमें दिखाने की कोशिश की है।"[4]

महेश आनंच के शब्दों में, जिस बारीकी और कुशलता के साथ कथ्य को प्रस्तुत किया गया है, उससे कुछ ऐसे प्रश्न उभरते है जो बार–बार दर्शक को कुरेदते हैं।"[5] वस्तुतः इस नाटक में ऐसे सन्दर्भों को उठाया गया है, जो मध्यवर्गीय संत्रास को दिखाते हैं।

1. पारिवारिक विघटन की गाथा– यह नाट्य कृति पारिवारिक विघटन की गाथा है। इस अभिशप्त कुटुम्ब का हर एक सदस्य एक दूसरे से कटा हुआ है। ' बड़ी लड़की' मनोज रूपी हमदर्द को पाते ही बाहर निकाल भागी है। लड़का 'अशोक' पत्रिकाओं से अभिनेत्रियों की रंगीन तस्वीरें काटता हुआ उस मौके के इन्तजार में है, जब वह भी यहां से निकल सकेगा।

अपने पिता केलिए उसमें करुणा है, माँ के लिए आक्रोश। छोटी लड़की, पिता, माता, बहन, भाई किसी के प्रति लगाव महसूस नहीं करती। अपनी छोटी– छोटी आवश्यकताओं की आपूर्ति से बेहद कड़वी होकर वह कैंची की तरह जुबान चलाती है और यौन सम्बन्धों में दिलचस्पी लेने लगती है, जो उसकी आयु से कहीं आगे है। अशोक अपनी माँ सावित्री के प्रभावशाली व्यक्तियों से सम्बंध बनाने का विरोधी है। क्योंकि ऐसे लोगों के घर में आने पर वह कहीं और छोटा हो जाता है। दफ़्तर और घर में दिन भर खटती सावित्री सिर्फ बिन्नी से ही थोड़ी सी सहानुभूति पाती है कि घर में ऐसा क्या है, जो यहाँ से निकल जाने के बाद भी उसके और मनोज के बीच काली छाया के समान आ जाता है। ''न केवल पति पत्नी के आपसी सम्बन्ध तनाव पूर्ण है माता पिता के बच्चों से, भाई बहन के आपस में किसी के भी सम्बंध केवल झेलने वाले लगते हैं। किसी भी प्रकार की आदर की भावना किसी के भी प्रति किसी के मन में नहीं है। केवल है तिरस्कार और अनादर।''[6] कुल मिलाकर ये पारिवारिक विघटन दिलचस्प ढंग से बहुस्तरीय है।

2. मानवीय संतोष का अधूरापन एक अन्य स्तर पर– यह नाट्य–रचना मानवीय संतोष के अधूरेपन का रेखांकन है। जो जिंदगी से बहुत कुछ चाहते हैं, उनकी प्राप्ती अधूरी ही रहती है। महेंन्द्रनाथ, सिंहानिया, जगमोहन और जूनेजा में अलग–अलग गुणों के चार पुरुष हैं। चुनाव के एक क्षण में सावित्री ने महेन्द्रनाथ के साथ विवाह कर लिया और आगे चल कर अपने को भरा पूरा महसूस नहीं किया। लेकिन अगर वह महेन्द्रनाथ की बजाय जगमोहन से रिश्ता जोड़ती, तब भी अनुभूति वही रहती, क्योंकि तब जगमोहन में जुनेजा के गुण नहीं मिलते। ''नायिका सावित्री की त्रासदी है कि वह बहुत कुछ एक साथ प्राप्त करना चाहती है। प्रत्येक पुरूष में सम्पूर्णता ढूँढ़ने का प्रयत्न करती है, जबकि प्रत्येक स्थल पर कोई न कोई अपूर्णता, तनाव, स्वार्थ, अनिर्णय अवश्य विद्यमान है।''[7]
3. व्यक्तियों की विभिन्नता के बावजूद मानवीय अनुभव की समानता – यह नाटक व्यक्तियों की विभिन्नता के बावजूद मानवीय अनुभव की समानता का दिव्यदर्शन है। महेन्द्रनाथ की जगह पर जगमोहन को रख देना या जगमोहन के स्थान पर जुनेजा को रख देने से स्थिति में कोई बुनियादी अन्तर नहीं पड़ता, क्योंकि परिस्थितियों के ढ़ांचे में व्यक्ति लगभग समान ढ़ंग से बर्ताव करता है।
4. स्त्री–पुरुष के बीच के लगाव और तनाव का दस्तावेज़– प्रस्तुत कृति स्त्री पुरुष के बीच के तनाव और लगाव का दस्तावेज है। महेन्द्रनाथ सावित्री से बहुत प्रेम करता है। सावित्री भी उसे चाहती है, परन्तु विवाह के बाद महेन्द्रनाथ को बहुत निकट से जानने पर उसे उससे वितृष्णा होने लगी, क्योंकि जीवन से सावित्री की अपेक्षाएँ बहुमुखी और अनंत है। अब महेन्द्रनाथ की बेकारी की हालत में सावित्री बहुत कटु हो गयी है। ''एक और घर चलाने का असहय बोझ है, तो दूसरी ओर ज़िन्दगी में कुछ भी हासिल न कर पाने की तीखी चोट।''[8]
5. बाज़ारवाद से उत्पन्न होती रिश्तों की पुनर्व्याखया– आधे अधूरे मौजूदा जीवन में बाजारवाद की विडम्बना के सघन बिन्दुओं को रेखांकित करता यथार्थपूरक स्थितियों को और अधिक विश्वासनीय बनाता हुआ जीवन के एक गहन अनुभव खेल को मूर्त करता है। सर्वदा देखा जाए तो इस नाटक की बुनियाद ही बाजारवाद से जुड़ी है। इस नाटक की मुख्य नायिका सावित्री जो एक गृहिणी है, उसकी अपेक्षाएँ बहुमुखी और अनन्त हैं। रिश्तों के बीच जितने भी सवाल हैं केवल अर्थ को लेकर। समकालीन जीवन में तनाव भरी स्थितियों के बीच ला खड़ा किया है, इस बाजारवादी मानसिकता ने। केवल इतना ही नहीं, व्यक्ति इसके बीच जकड़कर रह गया है। बाज़ारवाद ने उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया है। जिसने रिश्तों में अपेक्षाएँ भर दी हैं वस्तुतः विवाह भी उपभोक्तावाद का एक माध्यम बन कर रह गया है। विवाह ने शारीरिक, आर्थिक और भावनात्मक उपभोक्तावाद के समीकर्ण बदल दिये हैं। आधे अधुरे इसी का उदाहरण है।
6. पारस्परिक सम्बन्धों में लगातार आ रहे बदलावों का अध्ययन आधे अधुरे सिर्फ एक नाटक नहीं है अपितु हमारे समाज, परिवार, व्यक्ति और उनके पारस्परिक सम्बंधों में आए लगातार बदलाव का गंभीर अध्ययन है। इक्कीसवीं शती के आरम्भ में विवाह जैसी संस्थाओं में जो विकृतियाँ उभरीं, आधे अधुरे उसी का सशक्त उधाहरण है।
7. आज का सामान्य यथार्थ– सातवें दशक का एक बार और अवलोकन करके देखें तो मोहन राकेश की अर्न्तदृष्टि का पता चलता है। उस वक्त कुछ लोग आधे अधुरे से पूरी तरह सहमत नहीं थे। आदर्शवाद का परदा उनकी आखों के आगे पूरी तरह से पड़ा हुआ था। घरों के भीतर जो लोग मर्यादा के अंदर रह रहे थे, वे भीतर से कितना घुटे हुए थे, आज की परिस्थितियां उसी का परिणाम हैं। उथल–पुथल तो तभी से सबके भीतर उछालें मार रही थी। उस वक्त के ये चौंकाने वाले दृश्य आज के सामान्य यथार्थ बन गए हैं।

## निष्कर्षत

मोहन राकेश का साहित्यकार रूप अत्यंत प्रशंसनीय है। उनका व्यक्तित्व बाहर से अत्यंत बिखरा हुआ, लेकिन अंदर से संवरा हुआ था। उनका संपूर्ण नाट्य साहित्य इसी तथ्य को प्रमाणित करता है। उन्होंने अपने नाटकों में भारतीय तथा पाश्चात्य नाट्य मूल्यों का प्रयोग करके तथा कतिपय नूतन मूल्यों का विधान करके इसे परंपरा से हटकर एक अभिनव रूप प्रदान किया है। मानवीय सम्बंधों की जटिलता, गहनता, खोखलापन, टकराहट आदि के संदर्भ में व्यक्ति के निजी सम्बंधों को समझने का एक सफल प्रयास है।

## सन्दर्भ


1. मदनलाल, नाटककार मोहन राकेश संवाद शिल्प, प्र. 9
2. घनानन्द शर्मा, मोहन राकेश व्यक्तित्व एवं कृतित्व, प्र. 1
3. वही, प्र. 65
4. हिन्दी समय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय का अभिक्रम आधे–अधूरे, मोहन राकेश
5. सं. सुंदर लाल कथूरिया, नाटककार मोहन राकेश, ले. महेश आनंच, समकालीन ज़िन्चगी और रंग मुल्यों की तलाश, प्र. 96
6. सरोज प्रकाश, स्त्री पुरूष सम्बंधों में मोहन राकेश प्र. 113
7. मंजुला दासत्र, साठोतर हिन्दी नाटक में त्रासद तत्त्व, प्र. 133
8. मदनलाल, नाटककार मोहन राकेश, संवाद शिल्प, प्र. 86